मिलूँगा तुम्हें !

मनीष पारीक

मिलूँगा तुम्हें !

(काव्य-संग्रह)

मनीष पारीक

बोधि
साहित्य जन-जन के लिए

बोधि
साहित्य जन-जन के लिए

बोधि प्रकाशन
14, केसर नगर ए, केसर चौराहा, नवजीवन हॉस्पिटल के सामने
मुहाना मण्डी रोड, मानसरोवर विस्तार, जयपुर-302020 (राज.)
मो. : 7877238110, 9660520078, 9829018087
ई-मेल : bodhiprakashan@gmail.com

कॉपीराइट © मनीष पारीक

प्रथम संस्करण : 2025

ISBN : 978-93-5536-784-6

आवरण संयोजन : बोधि टीम

मुद्रक
तरु ऑफसेट, जयपुर # 09829018087

मूल्य : ₹ 199/-

MILUNGA TUMHEN ! (POETRY) by Manish Pareek

सादर समर्पित मेरे पिता
प्राचार्य देवकी नंदन जी पारीक को
जिन्होंने मुझे बनाया !

अनुक्रम

मनीष पारीक का कविता-कर्म : इन्द्रशेखर 'तत्पुरुष'	11
आशीर्वाद: डॉ. हरिराम आचार्य	13
आत्मिक सौंदर्य से सराबोर कविताएँ : मायामृग	*16*
कवि की कलम से	*17*
उग रहे हैं कमल निरंतर	19
मिलूंगा तुम्हें	21
संघे शक्ति	23
कुछ कम कुछ ज्यादा	24
तेरा याद आना	25
तुम्हारा ख्याल	26
किसी बहाने से हूँ	27
कोरोनो	28
नम रहा कीजिए	29
ऐसी होली हो	30
आँख के उजाले	31
ऐसा कब होता है	32
अंधेरे डरा करते हैं	33
महाभारत	35
शब्द	37
चलता हूँ मैं	39
मुस्कुराते रहना	40
पहचान	42
फ़िक्र जमाने की	43
कैद की कविता	44
तू ही तू	46
कब होता है	47
सूरज उगाया मैंने	48
आस में	49
शहर	50
देख रहा हूँ	51
सूरते बदहाल	53
युद्ध	54
अच्छा था	56
दर्द	57
कैसे साथ चल पाओगे	58
लोग खरे है	59
सुकून मांगते है	60
परेशां मुझ सा	61
मन मयूर	62
करते है लोग क्यों	63
आवाज लगाई न गई	64
दुआओं में असर	65
तू फिर भी है	66
आर की ग़ज़ल	67
आपकी खुशी	68
रिश्ते निभाते हैं	69
रिश्ते	70
मुस्कुरा के कह दिया	71
किसे दोगे	72

सोचा न था	73
भ्रष्टाचार	74
बेइमानी का मुजरा	75
दिया जलाना है	76
दोस्त	77
कुर्सी	78
जंगल	80
लज्जा राखो गोबिंद	82
वक्र गति; सद् गति	83
बातें	85
आओ हम दिखें समझदार	86
भले लोग	88
मिट्टी के पहाड़ों पर टंगे गोल पत्थर	90
क़िस्मत शहर की	92
अलग इज़्ज़त, अलग लिहाज़	94
आग्रह और दुराग्रह	96
आकाशवाणी की उपज	97
एक पैगाम है जो देना है	99
नीतियां	101
चित्रकार परिचय	*103*

मनीष पारीक का कविता-कर्म

समाज में लोकप्रिय अपने किसी चिर-परिचित व्यक्ति के बारे में जब अकस्मात् यह सूचना मिलती है कि वह कविता भी लिखता है तो अपरिमित खुशी के साथ ही उसकी कविताएँ पढ़ने की भी उत्सुकता पैदा होती है। अपार हर्ष और विस्मय हुआ कि जिस मनीष पारीक के गायन को सुनकर मैं अनेक बार मंत्रमुग्ध हुआ हूँ और उनकी वह मर्मस्पर्शी आवाज मेरी स्मृति में सदा सुरक्षित रहती आयी है, वही मनीष पारीक कविता भी लिखते हैं। क्योंकि अनेक कार्यक्रमों, गोष्ठियों और सभाओं में मैं उनकी कंठमाधुरी का रसास्वादन कर चुका हूँ।

गायन कला में निपुण और आकर्षक आवाज के धनी मनीष की अधिकतर कविताएं ग़ज़ल और गेय काव्य के शिल्प में है। मनीष ने जब ग़ज़लों और गीतों के मुखड़े स्वयं की आवाज़ में गाकर सुनाए तो समय ठहर-सा गया। मैंने महसूस किया कि इन रचनाओं को इनकी ही आवाज़ में सुनना सचमुच एक विलक्षण अनुभव है।

युवा कवि मनीष पारीक सार्वजनिक जीवन में राजनीति के साथ ही अनेक सामाजिक संस्थाओं में एक दायित्वपूर्ण कार्यकर्ता के रूप में सक्रिय हैं। राजनीति जैसे अत्यधिक लोकमान्य, लोकलुभावन और जन जुड़ाऊ माध्यम में सक्रिय व्यक्ति का साहित्य सर्जना की ओर प्रवृत्त होना एक सुखद लक्षण है। यह हमें आशान्वित और आश्वस्त करता है कि राजनीति के अनेक दांव-पेंच और आरोह-अवरोह के बीच मानवीय संवेदना का एक रागदीप्त कोना अपनी सहजावस्था में सुरक्षित है, जहाँ से जीवन-मूल्य और मानवीय गरिमा की सुवास फैलती है।

कविताओं में एक ओर राष्ट्रभक्ति के संस्कार हैं तो दूसरी ओर मनुष्य की जिजीविषा और उसकी गरिमा का बोध है। संवेदनशील कवि मनीष पारीक की रचना में न परिवेश छूटता है और न परम्परा। वह एक ओर अपनी कविता में हाड़ी रानी, पन्नाधाय, पद्मिनी और मीरा को याद करते हैं तो दूसरी ओर 'तपती दुपहरी' का

यथार्थ बोध भी सहेजते चलते हैं। पर्यावरण के प्रति सजग मनीष की बेचैनी भी यहाँ लक्षित होती है, जब वे पूछते हैं- 'माटी जो बेच दी, फिर पानी खरीदोगे'।

आशा की जानी चाहिए कि मनीष अपनी इस सर्जन-यात्रा में और आगे तक जायेंगे। वे प्रतिभाशाली तो हैं ही, समकालीन साहित्य का सतत अनुशीलन उन्हें सर्जनात्मक उत्कृष्टता की ओर भी ले जाएगा। इन्हीं आत्मीय शुभकामनाओं के साथ-

-इन्दुशेखर 'तत्पुरुष'

पूर्व अध्यक्ष
राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

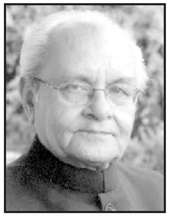

डॉ. हरिराम आचार्य
राष्ट्रपति सम्मानित

आशीर्वाद

एक विचित्र संयोग में युवा रचनाकार श्री मनीष पारीक से मेरी पहली प्रत्यक्ष मुलाकात हुई। मैं हृदयाघात के उपचार में बिस्तर पर लेटा था, तभी अपने संगीत प्रशिक्षक श्री ब्रजमोहन शर्मा के साथ मेरे कक्ष में इनका आगमन हुआ, इस अनुरोध के साथ कि इनके काव्य-संग्रह 'आधा पन्ना पूरी बात' की भूमिका मैं लिखूं। चकित भाव से मैंने इन्हें देखा। इतना तो सुनता आ रहा था कि मनीष पारीक जुझारू युवा नेता हैं किंतु मेरे समक्ष वे कवि के रूप में आये। बातचीत का सिलसिला शुरू हुआ तो पता चला कि ये संगीत-रसिक भी हैं, स्वयं गायक भी हैं, मंच वक्ता भी हैं, आध्यात्मिक चिंतक भी हैं और प्रतिबद्ध राजनीतिक नेता तो हैं ही।

अस्वस्थता के कारण मेरी बोलती बंद थी, पर इनकी वाग्मिता पर कोई प्रतिबंध नहीं था। इसलिए वे स्वयं को अभिव्यक्त करते रहे और मैं संयमित श्रोता की तरह इनसे परिचित होता रहा। इस एकालाप (मोनोलॉग) के कुछ दिन बाद दुबारा ये अकेले आए। पर इस बार इनके हाथों में इनके काव्य-संग्रह का कम्प्यूटर प्रिंट था। इस बार भाषण-पक्ष कम और काव्य-पाठ का क्रम अधिक चला जो मेरी रुचि का विषय था। इन्होंने सहज उन्मुक्तता के साथ अपनी कविताएँ पढ़ीं, उनकी पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला, राजनीति परिवेश में किस प्रकार उनका विचारक सामाजिक सरोकारों से जुड़कर उन्हें कविता में ढालने को बेचैन हो उठता है, उसी क्रम में जो शब्दों में

उतरकर आता है, उसका संग्रह तैयार हो जाता है-यही सब उस दिन की बातचीत का हिस्सा था, पर इस बार की मुलाकात एकांत में एक मौलिक रचनाकार से साक्षात्कार थी। जाते-जाते मनीष अपनी रचनाएं मेरे पास पढ़ने के लिए छोड़ गए।

मैंने कभी वाग्देवी सरस्वती से एक प्रार्थना-गीत में मांगा था-'बोलें कम, पर कहें अधिक, ऐसे उजियाले अक्षर दे माँ।' कम शब्दों में पूरी बात कह जाने की शक्ति ही व्यंजना शक्ति है, जो अच्छी कविता का मर्म भी है और धर्म भी लेकिन यह शक्ति ही व्यंजना शक्ति है, जो अच्छी कविता का मर्म भी है और धर्म भी लेकिन यह शक्ति किसी अज्ञान की कृपा और अथक साधना से ही मिल पाती है।

'हम' कवि मनीष का तख़ल्लुस है, जो ग़ज़लनुमा रचनाओं में प्रयुक्त हुआ है, ग़ज़ल फारसी से उर्दू में आई एक साहित्यिक विधा है, जिसकी एक 'बहर' होती है, जिसे निभाते हुए शेर कहे जाते हैं। मनीष के लहजे में उर्दू के अल्फ़ाज़ है, तख़ल्लुस है, शेर का लिबास है, मगर इस संग्रह को ग़ज़ल संग्रह नहीं कहा जा सकता। इसे काव्य-संग्रह का ही नाम दे सकते हैं। कविता के उन्मुक्त कलेवर में बहुत-कुछ समाहित किया जा सकता है। एक विचार, एक उद्गार, छंद-अछंद, गीत-अगीत, क्रम-अक्रम यानी सब-कुछ जो सहज अभिव्यक्ति में शब्दबद्ध किया जा सके। स्वयं कवि ने लिखा है-''मेरे शब्दों को कविता न कहें, इन निरे शब्दों को पढ़ने के बाद जो प्रश्न, जो भाव आपके मन में बनेंगे, वो ही मेरी कविता है। ...अपने सार्वजनिक जीवन में रोज़मर्रा की मर्यादाओं और आनंद के साथ हुए अनुभवों को मन की भाषा देकर सहजता से लिख दिया है।'' इतनी स्पष्ट स्वीकारोक्ति के बाद कवि मनीष की काव्य-रचनाओं पर समीक्षात्मक टिप्पणी करने की कोई आवयश्कता ही नहीं रह जाती। न उनका किसी कथ्य विशेष के प्रति आग्रह है, न ही किसी शिल्प के प्रति मोह। इसलिए किसी साहित्यिक विधा या शास्त्रीय बंदिश के अभ्यास को उनकी कविताओं में खोज पाना कठिन ही होगा। उनकी अभिव्यक्तियों में वर्ड्सवर्थ की परिभाषानुसार 'प्रबल अनुभूतियों के विस्फोट' का आभास अवश्य है। कतिपय उदाहरण-

इस तरह 'मन की बात', 'और ये हालात' से रूबरू होता मनीष का कवि अध्यात्म के मनीषियों के अनुभूत परम सत्य का बखान करना नहीं भूलता-

मीरा, सूर, कबीर, रैदास
दूरस्थ ज्ञान के कितने पास
सबके लिए है खुला आकाश।

अलबेलेपन की अल्हड़ता के साथ अपने उद्‌गारों को शब्दों में पिरोने वाले मनीष पारीक के कवि रूप को मेरी हार्दिक शुभकामना।

आत्मिक सौंदर्य से सराबोर कविताएँ

मनीष पारीक को अगर आप एक राजनेता या सामाजिक कार्यकर्ता की तरह ही जानते हैं तो यह पहचान अधूरी है। वह मूलत: एक संवेदनशील रचनाकार हैं, जो संयोगवश राजनीति के क्षेत्र में भी हैं। उनके पास न केवल कवि हृदय है बल्कि सांसों में संगीत भी गहराई से रचा-बसा है। बिना किसी वाद्य के भी उनका गायन शब्द-दर-शब्द श्रोता के मर्म को स्पर्श करते हुए अमिट छाप छोड़ता है। प्रस्तुत संग्रह में पारीक की रचनाएं अच्छे की कामना के लिए रचे गए हार्दिक शब्द हैं। दुनिया को खूबसूरत बनाना उनका खूबसूरत सपना है और इस सपने को पूरा करने के लिए वे हर किसी उचित माध्यम का उपयोग करते हैं। उनके लिए कविता राजनीति नहीं है, लेकिन राजनीति को वे कविता की तरह देखना चाहते हैं। संवेदनशीलता, इंसानियत, सहजता, अपनापन और आपसदारी उनके काव्य का मूल भाव है। इन रचनाओं को इसी सद्‌भावना के साथ पढ़ा और समझा जाना चाहिए। इस संग्रह की रचनाएं सामाजिक, राजनैतिक पूर्वाग्रहों से मुक्त एक ऐसे कवि की रचनाएं हैं, जो जगत को समग्रता में देखने में विश्वास करता है।

कदम साथ उठेगा, चलेगी साथ जो
गन्ध अभी पहचान ले उस साँस को

तो उनकी मानवतावादी दृष्टि और जगत के प्रति गहरा विश्वास साफ-साफ दिखाई देता है। आशा, विश्वास, स्नेह, अपनत्व, साझापन, प्रकृति और आत्मिक सौंदर्य यह सब पहलू मनीष पारीक की कविताओं में दिखाई देते हैं, इसलिए यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि पारीक, जो कि 'हम' उपनाम से लिखते हैं, पूरी तरह सामूहिकता में विश्वास करने वाले सकारात्मक रचनाकार हैं। इस प्रस्तुति पर मैं उन्हें हार्दिक बधाई देता हूं।

-मायामृग

कवि की कलम से

आपका आभार व्यक्त करने को तीसरी बार प्रस्तुत हूँ कि आपने अपने पढ़ने-विचारने और प्रतिक्रियात्मक प्रोत्साहन के लिए मेरे पहले दो कविता संग्रहों को चुना, आपने पढ़ने के लिए मुझ पर विश्वास किया, आपका यह भरोसा ही मेरी सबसे बड़ी प्रेरणा है। मेरे शब्दों को कविता ना कहें, इन निरे शब्दों को पढ़ने के बाद जो प्रश्न, जो भाव आपके मन में बनेंगे वो ही मेरी कविता है। इसलिए मैं लिखने वाला जरूर हूँ, पर कवि आप ही हुए। वैसे भी हवाओं पर जोर नहीं होता।

हवाओं को बांधा नहीं जा सकता, बस आप अपने हिसाब से गंध लीजिए।

उन सबका आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने मेरे अंतर्मन को जागृत रखा और इस सलौनी दुनिया को ज्यों कि त्यों स्वीकार करने की ईमानदारी मुझ में पैदा की।

बरस की ज़िंदगी में ये ही समझ पाया हूँ कि मुझे लोगों से प्यार है, मैं लोगों के बिना नहीं रह सकता। लोगों की चाहत ही मुझे खुश रखती है और इसीलिए मैं 'हम' जैसा हूँ।

मैं उन सभी अच्छे लोगों को प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने इस दुनिया को खूबसूरत बना रखा है। मैं तमाम बुरे हालातों का भी शुक्रगुजार हूँ, जिन्होंने मेरी नजर में लोगों को अच्छा और समझदार बनाए रखा है। मजबूती का आधार तो है ही।

संसार के सबसे बड़े सांस्कृतिक राष्ट्रवादी संगठन की उदारता की मिसाल भी ये रचनाएं हैं कि लगभग आधी ज़िंदगी इसके साये में रहने और पूरी तरह उसके आवरण में रहने के बावजूद मेरी निजता बिल्कुल महफ़ूज रही और विचारधारा में आबद्ध तो मैं हूँ ही। अपने सार्वजनिक जीवन में रोजमर्रा की मर्यादाओं और आनंद के साथ हुए अनुभवों को मन की भाषा देकर सहजता से लिख दिया है। प्रकृति, संगीत और

मानवीय संवेदनाएं मुझे सर्वाधिक आकर्षित करती हैं। निशदिन सक्रिय रहने की अपनी सीमा के बीच साथ देने, साथ रहने, साथ चलने और साथ बढ़ने के ध्येय को पुष्ट करती परिस्थितियों के बीच जीवन चलता रहे, यही कामना ईश्वर से करता हूँ।

अपने परिवारजनों, रिश्ते रखने वालों और मित्रों को भी धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होंने सदा साथ निभाया और मुझे सहूलियतें दी, जिससे मैं, मैं बना रहा। डॉ. रामसहाय पारीक एवं श्री मायामृग का आभार व्यक्त करना चाहता हूँ कि वे मेरे जैसे को भी लिखने-छपने को प्रेरित कर सके। बोधि प्रकाशन के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ कि उन्होंने मेरे टूटे-फूटे शब्दों को सुन्दर पुस्तकाकार दिया है।

सोशल मीडिया युग में पुस्तक आपको पसंद आएगी और लिखने-पढ़ने का काम जारी रहेगा। इसी आशा के साथ-

आपका

-मनीष पारीक

उग रहे हैं कमल निरंतर

उग रहे अब कमल निरन्तर
तोड़ राजनीति के आडम्बर
हरित धरा और नीला अम्बर
स्वार्थ लाभ तज मार्ग दुष्कर

चुभ रहे थे जो शूल निरन्तर
वंश बेल और लाभ श्रेयस्कर
सत मूल्य पर नित प्रहार कर
जन सम्पदा निज संपत्ति कर

सफल तपस्या जन तंत्र की
जैसे शक्ति हो वरद मंत्र की
चढ़ने पुष्प ज्यों राष्ट्र देव पर
आए नवपंख ज्यों गरूड़ पर

नई उषा अब खिली द्वार पर
सेवक जब तज आए द्वार घर
केवल माता का हित जानकर
निश दिन सेवा का व्रत धारकर

विश्व गगन पर लहराए फरफर
भारत का सम्मान संस्कृति सर
समर्पित मेधा ज्ञान सनातन वर
मूल्यवान है भारत के नारी नर

मिलूंगा तुम्हें

मिलूँगा तुम्हें।
टाट बिछी कक्षा की खेल घंटी में नही
मिलूंगा तुम्हे प्रयोगशालाओं में बरस दर बरस प्रयोग दर
प्रयोगों के बाद

नहीं मिलूँगा इंग्लिश काउंटी के एक मैच देख लेने पर ही
मिलूंगा तुम्हें गली में कंचे खेलते बच्चे के महीनों की
मशक्कत के बाद जीते हुए कंचों की तरह

नही मिल सकूंगा महज़ एक एयर पोर्ट से दूसरे एयरपोर्ट तक
महंगी छोटी सी यात्रा से
मिलूँगा तुम्हें कई बसें बदल कर नाव से चल कर नदी के
मुहाने किसी गावँ तक के सफर के बाद

बचपन में माँ की गोद ही में नही मिल जाऊँगा तुम्हें
मिलूँगा तुम्हे कई बरसों तक जीने के संघर्ष के अधपके बालों
के बाद झुर्रियों तलक

मिलूँगा नहीं सहूलियत की ज़िंदगी जी कर अलस भरी
जमुहाई में कभी
मिलूँगा तुम्हें थक के चूर पसीने से नहाने के बाद

नहीं मिल जाऊँगा गली के किसी कोने पर पुराने दोस्त की
तरह कोई दिन
मिलूँगा तुम्हें दशकों बाद मुश्किल से मेले में बिछड़े भाई की
तरह
नही मिलूँगा एक ही शहर में किसी पार्क की बेंच पर
मिलूँगा तुम्हें लंबी दूरी की मानसरोवर सरीखी यात्रा के अंत
मे बच के आने के बाद

मिलूँगा तुम्हें; मेरे मुकद्दर
मिलूँगा तुम्हे मैं खासी मुश्किलों के बाद
मिलूँगा तुम्हें।।

संघे शक्ति

देश के दुश्मन सदा जिनसे ख़ौफ़ खाते हैं
राष्ट्रवादियों पर हमले की योजना बनाते है।

हिली आतंकी सत्ता मिले चुनौती निरन्तर है
मां की सेवा करने का ये ही एक प्रत्यंतर है।

निज स्वार्थ त्याग देश की सेवा सदा जारी है
भारतीय का राष्ट्रवाद उनके लिए बीमारी है।

दुकान नौकरी करता स्वयंसेवक सिपाही है
सामान्य गृहस्थ ने उत्कट देशभावना पाई है।
घर बार छोड़ने वाले कितने ही जीवनव्रति है
हर बालक में दिखती उनकी ही आवृत्ति है।
एक निरन्तर शाखा से क्या क्या होजाता है
देश का दुश्मन संघशक्ति से खौफ खाता है।

कुछ कम कुछ ज्यादा

बहुत से कुछ कम और कम से कुछ ज्यादा
क्या बंट सकेगा सब कुछ आधा आधा

अपने सपने मेरे अपने, खुशियों का वादा
बहुत से कुछ कम और कम से कुछ ज्यादा

मुस्कराहट किसी की बादशाह, ज़माना प्यादा
बहुत से कुछ कम और कम से कुछ ज्यादा

माने नहीं जो, प्यार इतना ज्यादा
बहुत से कुछ कम और कम से कुछ ज्यादा

समझता हू जितना, करे हैं वो हैं इतना
बहुत से कुछ कम और कम से कुछ ज्यादा

जन्मों का रिश्ता, मिलता नहीं सीधा सादा
बहुत से कुछ कम और कम से कुछ ज्यादा

मुझसा कोई मिला है, क्या हैं अब इरादा
बहुत से कुछ कम और कम से कुछ ज्यादा।

तेरा याद आना

कौन क्या सोचेगा, क्या कहेगा ज़माना
किसे याद करना और किसे याद आना

हो या नहीं हो, बस चाहे पास आना
जिसे याद करना और जिसे याद आना

किस्सा नहीं सुनो, नहीं है ये फ़साना
तुम्हें याद करना और तुम्हें याद आना

खुदको भूल जाऊँ, हैं उसे याद आना
किसे याद करना और किसे याद आना

हकीकत बना हैं, ख़्वाब इक पुराना
जिन्हें याद करना और फिर याद आना

रस्ता हैं खूबसूरत, खूबसूरत ठिकाना
फिर याद करना और फिर याद आना

तुम्हारा ख्याल

दुआये कभी रद्द नहीं होती
यादो की कोई हद नहीं होती

जो भी कीजिए शिद्दत से कीजिए
यूँ ही तमन्नाएं कोई बेहद नहीं होती

मन बस बेज़ार सा हुआ बैठा हैं
किसी की याद क्यूँ कम नहीं होती

मिलते नहीं तो अच्छा नहीं लगता
उनकी शिकायत बेदम नहीं होती

यूँ तो गुजर गए बरसों बेख्याली में
ये चार शामें ही बस कम नहीं होती

किसी बहाने से हूँ

हर जगह मौजूद किसी फसाने से हूँ
मैं हमेशा तेरे करीब किसी बहाने से हूँ!!

लोट गया था शातिर कभी का पैरों में
खुद को देखना होगा तेरे सिरहाने से हूँ!!

मंजर हरियाली बहारों के रोज मिलें
मैं तेरी चौकसी में तोप के दहाने से हूँ!!

ऐश ओ आराम भी किसी को लाए होंगे
बदले तस्वीर मकसद को चाहने से हूँ!!

जलालत की जिंदगी से मौत अच्छी है
हसरत भरी आंखों के बुलाने से हूँ!!

बनारस की सुबह न शाम ऐ अवध
तपते रेगिस्तान के शामियाने से हूँ !!

रोजाना पकवान का जिक्र भर नहीं
भूखे को पेट भर मिले खाने से हूँ!!

कोरोनो

जबसे इंसान कुछ निष्काम से है
पौधे फूल पत्ते कुछ आराम से है
जल हवा आकाश स्वच्छ निर्मल है
पंछी जंतु भी कुछ विश्राम से है

श्वास पवन कुछ साफ सुधारी है
ओजोन छेद की मरम्मत जारी है
अधिकार ले लिए प्रकृति ने हमसे
झरना ताल तलैया अविराम से है

अनुशासन को छोड़ मदमस्त हुए तो
मुंह ढकना और प्रक्षालन अब जारी है
वायुमंडल भी धूल धूसरित नही रहा है
जैसे क्षमा प्रार्थना अपने राम से है

हरे भरे वृक्षों का कटना रुका नही तो
मुर्गी चिड़ियों का प्रतिशोध जारी है
सुबह तक जो चिंता ना थी पृथ्वी की
लगी हुई खुद की चिंता अब शाम से है

गोद बैठ माता का जो आँचल छेदा
कुपित सृष्टि ने वक्र दृष्टि से ऐसे भेदा
खुली हुई धरती तो जैसे चहक रही है
इंसानी मतलब कक्ष और धाम से है

नम रहा कीजिए

बदलते मौसम का मज़ा लीजिए
पत्ते गिर रहे है क्या सजा कीजिए

सुर्ख थे जब भी थे अब नहीं है
उम्र उनकी हुई है भुला दीजिए

सोचते थे के वो न गिरेंगे कभी
जो उगे है गिरेंगे बता दीजिए

सूखे है सख्त है बेरंग हो चले है
ऐसी सूरत नयो को दिखा दीजीये

घरौंदे बने डालियाँ मिलके कई
साये महज़ का क्या गुमां कीजिए

रोज़ की कहानी सूखते ही गिरना
जब तक कोशिश नम रहा कीजिए

ऐसी होली हो

राग रंग रस गन्ध मिले ऐसी होली हो
टेसू अबीर गुलाल मले ऐसी होली हो

रस के बादल रंग से बरसें ऐसी होली हो
बैर भुलाकर प्रेम से तरसें ऐसी होली हो
गीत बनाकर रिश्ते गाएं ऐसी होली हो
मीत बनाकर भूल न पाएं ऐसी होली हो

निर्धन निर्बल विघ्न रहे ना ऐसी होली हो
रूप बदल कर सबरंग आएं ऐसी होली हो
भूखा प्यासा रह न जाएं ऐसी होली हो
प्रेम करे तो मिल भी पाएं ऐसी होली हो

बुरे मंसूबे खुद जल जाएं ऐसी होली हो
जीवन आंनद रीत निभाएं ऐसी होली हो
अपने जल्दी बिछड़ न जाएं ऐसी होली हो
मां बच्चों सा साथ निभाएं ऐसी होली हो

मेहनत करें वे फल भी पाए ऐसी होली हो
यज्ञ करे का हाथ न जलाए ऐसी होली हो
आत्म तत्व का धर्म निभाएं ऐसी होली हो
प्रेम प्रीत से सब रंग जाएं ऐसी होली हो

आँख के उजाले

फूल देखने वालों ने पैर के छाले नहीं देखे
पहाड़ चढ़ने वालों ने कभी पत्थर नहीं फेंके

जल रहे हैं रोज जो उसकी रोशनाई से
ख़ुद अपने उन्होंने कभी कारनामे नहीं देखे

थकता नहीं कतई वो रोज शाम होने पर भी
तुमने कभी उसकी आंख के उजाले नहीं देखे

कहने सुनने में फकत जिंदगी तुमने गुजार दी
करने वालों के किसी ने शामियाने नहीं देखे

ले के बैठा हैं वो तुम्हारे कर्मों की किताब
हमने भगवान के हाथ कभी काले नहीं देखे

ऐसा कब होता है

ज़ख्म सारे भर जाएं ऐसा कब होता है
अपने सारे मिल जाएं ऐसा कब होता है

बेशक़ बादलों से भर गया है आसमां
सारे बादल बरस जाएं ऐसा कब होता है

बरसों तलक तकता रहा सारे तारों को
एक तारा भी मिल जाएं ऐसा कब होता है

एक पत्ता बन सकता है ज़ख्म की दवा
सारा जंगल मिल जाएं ऐसा कब होता है

मिलेंगे बिछड़ जाएंगे कई बार यार तो
तू बिछड़ने को मिल पाएं ऐसा कब होता है

अंधेरे डरा करते हैं

लड़ना खुद अपनों से पड़े तो
व्यर्थ नहीं लड़ा करते है
प्राची की पहली ही किरण से
अंधेरे खुद डरा करते है

पांच गांव की भूमि से क्या पेट कभी भरा करते हैं
किंतु सन्धि की कोशिश खुद केशव तक भी किया करते हैं (1)
अंधेरे ख़ुद डरा करते हैं

अपने अपने पाप लिखाकर अपने माथे पर चलते हैं
राज्य पाने से पहले बस पांडव लाक्षगृह में जला करते हैं (2)

अंधेरे ख़ुद डरा करते हैं

लज्जा बहुत अहंकारी है धृत भीष्म द्रोण तक लाचारी है
नही आती जब युवराजों को केशव चीर भरा करते है (3)

अंधेरे खुद डरा करते हैं

कैकई कब थी इच्छाचारी

भरत कौन राज करना था
रावण नाश करन के कारण
राम बन में फिरा करते है (4)

अंधेरे खुद डरा करते है

पहले काहे बताना कंस को
मारनहार तेरा जनम चुका
शिशुवध पाप घड़ा भरने को आकाश शब्द किया करते है (5)

अंधेरे खुद डरा करते हैं

कुल को उन्नत उज्ज्वल दीपक रोज़ किया करते है
अभिमन्यु वध में अट्टाहासित कर्ण अस्त्रहीन मरा करते है (6)

अंधेरें खुद डरा करते हैं

पापी न हो कोई दुनिया मे ऐसा कभी नहीं होता है
ब्रह्मास्त्र से शिशुवध के कारण अश्वत्थामा शापित रहा करते है (7)

अंधेरे ख़ुद डरा करते हैं।

महाभारत

दु:शासन जो चीर हरे दुर्योधन जंघा हाथ लगाते
लज़्ज़ित द्रोपद भरी सभा में अर्जुन पांडव दुख है पाते

पांच भले तो सौ बिगड़े है
हेड़े बनकर पेड़े खाते
जिनके पीछे पड़े दरोगा मोटी मूँछें वर्दी पाते

बुरे कर्म का फल देने को अच्छे कारिंदे ढूंढे जाते
लंदन के ये पढ़े कायदे भारत की है तनख्वाह पाते

एक परीक्षा से हाकिम हो गलत सही का भेद सिखाते
किस्मत जिनकी भेद कराए वे नसीब का भेद मिटाते

लकीरों की नजीर पे रोज़ फैसले सुनाये जाते
भुगते कोई और के कारण हालात की साजिश बताते

अपराधशास्त्र की बंदिशों पर मनोविज्ञानी ग़ज़ल सुनाते
लालन पालन संग कुसंग के हालात है बताए जाते

इन किस्सों के इर्द गिर्द हम अच्छे बुरे कहलाते
प्यासा जीवन झूठा झांसा सुख सुविधा के भोले नाते

रोज़ चढ़े फांसी फिर भी दुष्कर्म पांच गुना बढ़ जाते
क्षतिपूर्ति मानव हाथ में बाकी सारी भाग्य की बातें

गांव खत्म और शहर भरे है
ऐसे कैसी रोटी खाते
मैय्या तेरे बच्चे गंदे जबकि हैं ये रोज़ नहाते

शब्द

कुछ शब्द जैसे बने ही नही है बोले जाने को
मुरादों के लिहाफ में सिकुड़े से पड़े रहते हैं वो सदा
जिस्म नही पाते है ख्वाब ज्यूँ बस हवा में उड़ते रहते है,
होठ मिलते है सजाके रखने को
लेकिन वो किसी कान से उतरते नही है नीचे
आकाश की तरह होते है अस्तित्ववान

लिहाज़ और लिहाफ़ बिल्कुल एक जैसे
ओढ़ के पड़े रहती है नग्नता जिन्हें
जैसे दरवाजे पे खड़ा कोई कम दर्जे का मेहमान
भारी भरकम भाग्यवान के कमरे में नही घुसता केवल
इसलिए कि
गन्दा न हो जाए बेमानी कालीन किसी भी पद चिन्ह से

शब्द भी इसलिए बाहर खड़े रहते हैं कि
इनका उच्चारण का नृत्य देखने वाले के शब्दकोश को
लज़्ज़ित न कर दें या
फिर धुंआ भर दे उसकी उपलब्ध मंशा में
न सूझे कुछ भी जवाब और अस्तित्व को आंच आए उसके
नंगे शब्दों की व्याकरण का
कोई क्या बिगाड़ सका है कभी भी,

फिर भी ढूंढते है हम सदा शब्द बेहतर
पर अक्स चाहिए होते है अक्सर कमतर
क्योंकि भीगे हुए को सुखाने के बाद भी
दुनिया का कोई भी छाता अंतर्मन को
भीगने से नही बचा सकता
वो ही हमारा संतोष है, छाते के नीचे

सिकन्दर के शब्द खत्म हुए तो मुट्ठियाँ खोल दी मजबूरी में
बहुत से शब्दों को नही सुन पाया था
वो भी नौकरी बजाते हुए विलास की
बहाने उसके पास भी थे युध्द और संधियों के पर
शब्द न थे।

चलता हूँ मैं

कितना मुस्कुरा के तुझसे मिलता हूँ मैं
थमी सी ज़िंदगी में कितना चलता हूँ मैं

ऐन वक़्त पर वो पता बदल देता है
डाकिए तक को कितना खलता हूँ मैं

ठंडी पड़ी है वादियां गुलशन है नम
तेरी रोशनी में कितना जलता हूँ मैं

हसद[1] में जल रहा है हर एबशर[2]
बस एक तेरे नेह से पलता हूँ मैं

अच्छा लगे जो तू बस घर कर लूं
फिर पुराने ख़्वाब सा टलता हूँ मैं

हिचकी ओ अंगड़ाइयां रोज़ आती है
फ़क्त[3] तेरे लिए कितना मचलता हूँ मैं

कहने भर से हर बार मान जाता हूँ
कैसा शख्स हूँ कितना बदलता हूँ मैं

1. हसद– जलन **2.** एबशर = व्यक्ति **3.** फ़क्त– केवल

मुस्कुराते रहना

पसीने आएंगे ज़िंदगी के
तुम फूल खिलाते रहना
उदासी बाहें फैलाएगी
पर तुम मुस्कुराते रहना

सो जाएंगे चांद सितारें
तुम ख़्वाब जगाए रहना
उगते सूरज की लाली से
तुम आस लगाए रहना

आएं नहीं जो कोई
तो क्यों बुलाते रहना
मिले जो किसी मोड़ पर
उन्हें अपने बनाते रहना

उम्मीद सजाते रहना
मन को मनाते रहना
लाख हसें ज़माना चाहे
तुम इक मुस्कुराते रहना
चांदनी की डोली पर
सदा तारे नही आते

कांटों की गोदी में भी
तुम फूल खिलाए रहना

तुम चाहो वो न हो
तो भी चाहते रहना
रहेगा हो के एक दिन
ये ही कहाते रहना

आस की तसल्ली है
तो है हर दिन दिवाली
बस वजूद के दिए की
ये बाती जलाए रहना।

पहचान

सूरतें अभी देख लीजिए आस पास की
पहचान अभी कर लीजिए दूर खास की

मिलेंगे मुस्कुरायेंगे बातें बनाएंगे जब
सोचना क्या है औकात इस खास की

आसमां छेद देगा आपके लिए जो
नाप लें अभी ऊँचाई उस बांस की

कदम साथ उठेंगा चलेगी साथ जो
गन्ध अभी पहचान लें उस सांस की

कहने सुनने में फल फूल लग रही
चुभन अभी जान ले उस फांस की

फ़िक्र जमाने की

ज़रूरत इसलिए है दिया ज़लाने की
कसमें खाई गई है दुनिया ज़लाने की

बात तो हुई थी दुनिया बसाने की
इज़ाज़त ले गया बस सताने की
कोई ग़ज़ल नज़्म शायरी न हुई
क्या ज़रूरत महफ़िल में जानेकी

दूर तलक भी कोई हालात न थे
आदत पड़ी थी मुकर जाने की
बाँट दिया था अपने अपनों को
यूँ फ़िक्र थी उसे सारे ज़माने की

कमज़र्फ़ी का आलम इतना था
गुंजाइश तक नहीं मुस्कुराने की
पेट कभी उसका भरते न देखा
कमी नहीं थी कुनबे में खाने की

मुहोब्बत में मुँह दिखाई कुछ ऐसी
जली नहीं शमा फ़िक्र में परवाने की
हर बुज़दिली का अपना किस्सा था
ऐसे ही नहीं उठी मीनार आबदाने की

कैद की कविता

मैं कैद की अभिनव कविता करता हूँ
दुनियावीं कैद में जैसे जीता मरता हूँ

आत्मज्ञान का मार्ग भी कैद होती है
बने महात्मा साधक भटकन रोती है
कैद अधिकार सम्मान गरिमा होती है
कैसे आप वास्तविक परिचय देती है

कैद में एक दिन हम सब ज़रूर होते है
हम भी कुछ दिन जैसे चिड़िया तोते है
देवी पुराण में है उद्भव के लिए पराभव
शक्ति की हो औषध जैसे कड़वा आसव

अच्छी नही है कैद खुश न होता मानव
डर के बैठा देखे खा जाए कोई दानव
यही विवशता सहते सीता औऱ राघव
विधि लिखती सदा दुष्टता का पराभव

लगे विधर्मी हाथ कैद का भी फायदा
फैला दे जैसे हाकिम स्वयं न्याय रायता

लाभ नही होता सुविधा से जाए बायदा[1]
मुफ्त मिले तो भी ज़हर न पिएं कायदा

नंगा करती कैद किसी को कभी ढाँपती[2]
कैद के नाम ही से कमजोर रूह कांपती
शासक आत्मा किन्तु इसका लाभ उठाती
अस्तित्व विवश से सामर्थ्य कर्मफल पाती

1. बायदा = व्यर्थ **2.** ढाँपती =ढक लेती

तू ही तू

ऐब ओ हुनर के साथ में
सबकी है बस चाहत तू

बाहें पसारे नैन बिछाए
सबको रोज़ पुकारे तू

मिल जाए तो मिट्टी है
खो जाए तो सोना तू

हँसे रोए कुछ न होए
होता वही जो चाहे तू

फैसले बेशक़ मेरे हो
पहले बाद में तू ही तू।

कब होता है

ज़ख्म सारे भर जाएं ऐसा कब होता है
अपने सारे मिल जाएं ऐसा कब होता है

बेशक़ बादलों से भर गया है आसमां
सारे बादल बरस जाएं ऐसा कब होता है

बरसों तलक तकता रहा सारे तारों को
एक तारा भी मिल जाएं ऐसा कब होता है

एक पत्ता बन सकता है ज़ख्म की दवा
सारा जंगल मिल जाएं ऐसा कब होता है

मिलेंगे बिछड़ जाएंगे कई बार यार तो
तू बिछड़ने को मिल पाएं ऐसा कब होता है

सूरज उगाया मैंने

ये बिखरी सी ज़ुल्फ़ें कांधे पे तेरे
इन्हें बादलों सा पाया है मैंने
ना बरसे सदा ये ज़रूरी नही है
इन्हें आगे सूरज के लाया है मैंने

साया रहे जो धूप लगती नही है
मौसम की राहें बदलती नही है
लरज़ते लबो पर जो था गीत तेरे
तरन्नुम सजा के ही गाया है मैंने

चमकते माथे सजी थी जो बिंदिया
बेला चमेली ने उड़ाई थी निंदिया
सिरहाने लगा के जो ख्वाब रखे
सवेरे उनसे सूरज उगाया है मैंने

चमकते गालों पे किस्मत सजी है
खुशियां जो आंगन उतरती नही है
बिखराने खुशबू इन्ही दायरों में
तुझे मुस्कुराने बुलाया है मैंने।।

आस में

फिर कल शाम इक लहर को छू कर आ गया
झील की बूंदे फिर दरिया को दे कर आ गया

फिर भरोसा फिर उम्मीदे फिर वही अहतराम है
जो था दिल मे एक कछुवे को कह कर आ गया

कुछ सीपियाँ थी घोंघे थे कुछ गोल से पत्थर
मोतियों की आस फिर घर ले कर आ गया

मांझियों के गीत और शोर लहरों के ज़हन में
तट के गहरे अंधकार में दीप धर कर आ गया

महज़ साथ चलने से कोई साथ रहता नही
फिर किसी बेगाने के साथ चल कर आ गया

शहर

मेरे अपने शहर में सब कुछ अपना सा है
साथ तुम्हारा हाथ रहे सच्चा सपना सा है

रोज़ रोज़ की मुलाकातों में कितना नयापन है
जवान होते लड़कों में ज्यों मीत अपना सा है

गलियां चौबारे अपनेपन की हवा चलती है
पलपल मुट्ठी ज्यों वक्त रेत फिसलना सा है

मिलना मिलाना ही जैसे जुनून ज़िंदगी का है
मुहोब्बत के दौर में ज्यों तेरा घर अपना सा है

किस्से कहने को ही बस आपसदारी नही है
जीने का सुख भी जैसे लिहाज़ रखना सा है

पल जो जिए जी लिए बस यही एक सत्य है
बाकी सब कहने सुनने के सिर्फ सपना सा है

देख रहा हूँ

मैं तुम्हारे भीतर देख सकता हूँ
सारा खाका खेंच सकता हूँ
तुम हीरों को कहते रहे पत्थर
कोयल को बताया तुमने कौआ (1)

मैं देख सकता हूँ उजाले अंधेरे हालातों में भी चमकते चाँद
की तरह जो उगाते है सूरज को रोज
जिसकी आग में जलते हो तुम (2)

भर रखा है मन को तुमने उनसे जो आगे बढ़ गए तुमसे जल्द
ही
या जो बेहतर थे पहले से ही तुमसे
जिन्हें जरूरत नहीं थी तुम्हारी
या जो झुके नहीं सामने तुम्हारे
ज्यादा पढ़े लिखे थे पुरस्कार पाए
पैसे कमाए या ज्यादा पसीने बहाए (3)

मैं देख सकता हूँ भीतर तुम्हारे
किस कदर अनदेखा किया तुमने
जो थे तुम्हारी ईर्ष्या वितृष्णा के केंद्र
वहीं जो पैरों पर अपने चलकर चढ़े थे

पहाड़ बुलन्दियों का फ़िर भी कमतर लगते थे तुम्हें,
क्योंकि तुम ना कर सके जो उन्होंने कर दिखाया ज़माने को
लुभाया बस तुम ना रीझे (4)
मैं देख सकता हूँ तुम्हारे भीतर तक कि कितना जले बुझे तुम
दूसरों से
और जुट गए उन्हें कमतर साबित करने में उनके पैरों को
उखाड़ने में
जिन्होंने बनाई मुश्किलों में जमीन (5)

मैं देख सकता हूँ वहां तक भी जहां
कोई नहीं दिखता खुद तुमसे बेहतर तुम्हें
क्यों बेकार बताते रहे सुरीले गायकों अद्वितीय कवियों को भी
क्योंकि तुम गा नहीं सकते ना लिख पाए कभी (6)

सूरते बदहाल

आखर आखर तक मिसाल है
आप जीती जागती मिसाल है

मेरे हिसाब में जो मशहूर था
पास होकर भी जो दूर था
लिखा है जिसको पढ़े गौर से
फुर्सत नहीं उसे ये मलाल है

वो चांद तारे साथ ले आया
पत्ता पत्ता हिसाब दे आया
राह एक मंज़िल एक होगी
सूरत तक देखना मुहाल है

इशारे तक समझता नहीं है
मुद्दा कोई सुलझता नहीं है
आह को वाह बदल देता है
कैसे कोई इतना खुशहाल है

एक जैसा फिर दूसरा नहीं है
अपने आप में एक वो सही है
सूरत भी एक जैसी रहती है
कोई जो हर सूरत में बदहाल है

युद्ध

होता जो ना विरोध तो कोई न चलता
भागता नहीं संघर्षों में नहीं पलता
ईच्छा नहीं होती जैसे मक़सद नहीं होता
ख़ुद को सही साबित करने की ललक भी
अपने विचार को जिताने की लालसा खोलती है सम्भावनायें
बेशक पर उससे पहले छेड़ती एक जंग यही जंग बनती है कारण

शांति से जीने की ईच्छा से बढ़कर है शांति स्थापित करने की
इच्छा
साबित करती है यही कि दुनिया किसी के इशारे पर नहीं चलती
इशारे पर चलता है आदमी

सब कुछ अपने आप होता है
या करते है हम
इस करने की गुंजाइश में पलता है आदमी
जैसे पल जाता है गेहूँ के साथ बथुआ आयरन से भरपूर
या बन जाता है नमक झील के पानी सुखाकर आयोडीन से भरपूर

किसी की कोशिश बनतीं है कर्म
कर्म बनते हैं धर्म; धर्म की रक्षा फिर उगाती है लड़ाई
लड़ाई पैदा कर देती है अपने पराये यहि वहीं होता है पक्षपात

और अन्याय
फिर जागता है न्याय और धर्म
फिर आते हैं केशव
होते हैं युद्ध
गायी जाती है गीता

अच्छा था

कुछ कर देने पर लगता है
कुछ ना करते तो अच्छा था

कुछ बातें कहकर लगता है
ना ही कहते तो अच्छा था

कुछ बातें सहकर लगता है
कुछ कह लेते तो अच्छा था

थम जाने पर लगता है
बह लेते तो अच्छा था

हो जाने पर लगता है
ना होता तो अच्छा था

तुमसे मिलने पर लगता है
ना मिलते तो अच्छा था!!

दर्द

बहुत दूर से आंखों के नूर हो जाओगे
सोचा ना था इक दिन दूर हो जाओगे।

जिस जमाने से दुश्मनी की थी
उसी जमाने में काफूर हो जाओगे।

सोच तो लो कितने अकेले हैं हम
अपने दिल को फिर क्या किस्से सुनाओगे।

क्या सोच के बने थे हमसफर 'हम'
मिलोगे सपने दिखा के रूठ जाओगे।

दर्द ही रह गया है अब मुहब्बत में
कभी 'हम' दिखायेंगे कभी तुम जताओगे।

कैसे साथ चल पाओगे

इक तड़प तक ना समझ पाओगे
क्या खाक तुम दिल लगाओगे।

कसक किसे कहते हैं जान नहीं पाते
कैसे किसी पे जान लुटाओगे।

दर्द देखते किसी का बैठे रहते हो
अब ना कहना के हमदर्दी निभाओगे।

याद तक 'हम' आते नहीं अकेले में
ज़िंदगी भर कैसे साथ चल पाओगे।

लोग खरे है

मित्र चित्र के पत्र हरे हैं
सत्र मौन अतृप्त धरे हैं।

पतझर बसंत ऐसे करे हैं
शाख-शाख से फूल झरे हैं।

धरती हरी, धरती परे हैं
प्रसन्न हृदय में स्वर्ग भरे हैं।

पंछी घटाएं उड़ान भरे है
प्यासे मन को तृप्त करे है।

नदी नाले उफान भरे हैं
प्रेम भरा ही एक तरे है।

प्रेम आस में सुगंध भरे हैं
हाल बुरे पर लोग खरे हैं।

सुकून मांगते है

रात भर जागते हैं, दिन भर भागते हैं
ज़िंदगी तुझसे, थोड़ा सुकून मांगते है।

ख्वाबों से दोस्ती है, और मुहब्बत खुद से
जाने क्योंकर उनसे क्या-क्या मांगते हैं।

कमा लिया जो तूने, तो भी कमी रहेगी
'आ' की मात्रा है, फिर 'ई' की जांचते हैं।

जिसने नहीं दिया, तब जवाब कोई
वे, सवालों की अब धूल फांकते हैं।

नींद आंखों में नहीं है, अरमानों की हुई
'हम' हैं कि बस उनके चेहरे को ताकते हैं।

परेशां मुझ सा

नहीं सुनता सदा कोई, न वो आवाज़ देता है
खुद को सुनाने को, अब उसका नाम लेता है।

कसक तन में उठे चाहे, दर्द मन में होता हो
परेशां है मुझसा कोई, वो पहचान लेता है।

ज़रूरत नहीं किसी की, यही तो बेरुखी है
ज़रूरत में तो इन्सां दामन थाम लेता है।

डरते थे नाम लेने से, उन दिनों जिसका
वो साया है, 'हम' चेहरे का नाम लेता है।

होने को तो नाम है एहसास भर का
जो आशिक है वो मुहब्बत नाम देता है।

मन मयूर

मौन तपस्या करने से संतोष आता है
मन मयूर आनन्द ताल में गोत लगाता है

डूब-डूब कर उठते हैं, जो ज्वार हृदय तल में
साक्षी रह के कर्म करे, रुचि नहीं फल में
ऐसे आनन्द में रत मन निश्छल हो जाता है
मन मयूर आनन्द ताल में...

मेरा नहीं कुछ दुनिया में मान नहीं पाता है
जो मिलता अपनेपन से कुछ देकर जाता है
बस देने के ही स्वभाव से तू सब कुछ पाता है
मन मयूर आनन्द ताल में...

है प्रतिष्ठा मनुष्य जीवन की इस उपवन में,
मन में पुष्प खिले चाहे, वो रहे किसी वन में,
स्वार्थ रत मन है पशु सम, वो निर्जन पाता है
मन मयूर आनन्द ताल में...।

करते है लोग क्यों

दुनिया बसी हुई है, उजड़े हैं लोग क्यों
बैगरत सा पसीना, महके हैं लोग क्यों।

ज़िंदगी सारी बहादुरी में गुजारी
मरते समय ही, ऐसे डरते हैं लोग क्यों

हंसते रहे जमाने भर पे लोग जो
खुद पे आ लगी तो, रोते हैं लोग क्यों।

कहने को जब दास्तां है उम्र भर की
दो ही पल का किस्सा होते है लोग क्यों।

करने चले थे भला, जब दूसरों का वो,
खुद का किया, और लौट आए लोग क्यों।

पर्दा उठा नहीं था और कर गुज़र गये
दिखाने भर को 'हम', करते हैं लोग क्यों।

आवाज लगाई न गई

बल न गया रस्सी जो जल गई
हवाएं चलाये से चलाई न गई

ऐंठे हुए रह गए जिस्म भर
रूह तो कभी बुलाई न गई

पानी रहा नहीं, न जुताई का शऊर था
फसल पुरखों की तुमसे खाई न गई

चली नहीं हवा फ़कत ये ग़म न था
परवाज़ भी परिंदों से बुलाई न गई

ज़र्रा नवाज़ी हमारी जो सुनते रहे तुम्हें
तुमसे तो आवाज़ भी लगाई न गई।

दुआओं में असर

उस ठंडी हवा को सलाम जिसने मेरे पसीने सुखाए हैं
शुक्रिया ज़िंदगी तेरी मिठास का तूने लम्हों के बताशे बनाएं हैं

अहसान है हालातों का जो सिखाते मुझे खुद ग़म भर के
इस ज़माने में ऐसे भी कौन किसी के लिए आए-जाए है

बनता है मेरे निगोड़े मुक्क्द्दर को भी एक सलाम तो
छोड़ के दामन जो मेरा किसी ज़रूरतमंद के काम आए है

सलाम उन्हें ठोक के ताल जो अड़े रहे मुझे रोकने के लिए
वक्त अपना ज़ाया कर मेरे लिए नरम लिहाफ बनाए है

शुक्रिया उनका जिसने चुन लिए अपने नाकाबिल
यही वो जुल्म-ओ-सितम है जो मुझे काबिल कहराए हैं

शुक्रिया उस रब का जो न दे के भी जो देता है
बढ़ा के मियाद-ए-बंदगी जो मेरी दुआओं में असर लाए है।

तू फिर भी है

खो जाए जो आस मगर तू फिर भी है
हो जाये जो नाश मगर तू फिर भी है

भूखे नंगे हाथ फैलाते तेरे आगे
कट जाए जो हाथ मगर तू फिर भी है

साथ चले सब तू जब रहता
कोई नही हो साथ मगर तू फिर भी है

गले लगाए जब जग तू दिखता
छोड़ दे सब जो साथ मगर तू फिर भी है

मंदिर मंदिर में तू मिल्या जाए
आ जाए शमशान मगर तू फिर भी है

वहम कल्पना भरम से आगे तू
सच्चाई में आम मगर तू फिर भी है।

आर की ग़ज़ल

आह जो निकली ग़ज़ल बन जायेगी
दिल की तल्खी होठों पे उतर जायेगी

तुम बस दिल की बातों को हवा दे दो,
सागर की मछली झील में चली आएगी

होगा तो कुछ नहीं इस भरी कायनात में
लुत्फ़ है, ग़ौर है, कलेजे में ठंडक आएगी

जिस पे ना बीती उसकी क्या बात करें,
बीत रही जिस पर असर दिखायेगी

दिल की बातों को कागज का पता देते हो
कश्ती जरूर 'हम' साहिल पे डूब जाएगी।

आपकी खुशी

आपकी खुशी का इतना तलबगार हूं
कि खुद के दर्द का गुनहगार हूं।

हो सकता है आपको भरोसा ना हो
पर मैं अपने आप में ऐतबार हूं।

रोज देती है ज़िंदगी उलझन नई
और मैं इन्हीं उलझनों में खुशगवार हूं।

पक के कट चुके हैं जो पुराने थे ख़याल
अब मैं नये ख़यालों की पैदावार हूं।

दुनिया के तूफानों से इतना रिश्ता है
फिर किसी के साथ चलने को तैयार हूं।

रिश्ते निभाते हैं

दर्द होता है उन्हें, जो हम मुस्कुराते हैं
ये दोस्त है मेरे जो दुश्मनी निभाते हैं।

उनकी हसरत हमारी फितरत ना हुई
बस इसी ख्याल से वो रूठ जाते हैं।

पूछते हैं लोग उनसे सवाल हक़ीक़त का
वो बड़ी मासूमियत से टाल जाते हैं।

जान ही जायेगी ये दुनिया एक दिन
कैसे वो स्याह को सफेद बनाते हैं।

शिकायत नहीं हुई आज तक हमें
कितनी शिद्दत से 'हम' रिश्ते निभाते हैं।

रिश्ते

जिक्र है ना फिक्र है, फिर भी हमारे हैं
हैरां हूं ज़िंदगी कैसे रिश्ते तुम्हारे हैं।

बिछ गये जो चादरों से, वो ना चाहिए
है नज़र में आसमां के जो सितारे हैं।

रूप से बदल गये, उम्र से वो ढल गये
चढ़ गये जो आंख में, दिल में उतारे हैं।

साथ चल रहे हैं, पता नहीं कौन है
साथ रह गये 'हम', वो ही हमारे हैं।

आप देख लीजिए आप सुनाइए
हम हैं ही कौन, आपके पुकारे हैं।

मुस्कुरा के कह दिया

होता है, होता है, मुस्कुरा के कह दिया
कौन कितना रोता है, मुस्कुरा के कह दिया।

साथ तो चलते नहीं थे, मेरे ही अज़ीज़
दूर तक ना चल सके तुम, मुस्कुरा के कह दिया।

छेड़ देने को बने थे, जो मेरे दिल ही के तार
गीत कोई हो ना सका, मुस्कुरा के कह दिया।

जीने को ये ज़िंदगी है, जी लीजिए ऐ हुजूर
एक पल भी जी ना सके, मुस्कुरा के कह दिया।

उम्मीदों से भरके 'हम' आये थे तेरे दर पे
आइयेगा फिर कभी मुस्कुरा के कह दिया।

किसे दोगे

माटी जो बेच दी, फिर पानी खरीदोगे
आने वाली पीढ़ीयों को क्या जवाब दोगे
ना चिड़िया, ना गिलहरी ना कबूतर आते हैं
दादी मां के रखे दाने फिर किसे दोगे

चौक की जामुन काट दी, तोते कहां आयेंगे
बाग में इमारत टांग दी, आम कहां खायेंगे
रंग जाते हैं अक्सर, रंग में हवाओं के
बदले हुए मगर, ये जज़्बात किसे दोगे
दादी मां के रखे...

लड़ते हैं जमीं के लिए, खूब अपने भाई से,
देख रहे हैं बच्चे अपने, खिड़की पराई से,
बेच के जाएंगे, जब मालिक नौकरी पे
बदले हुए मगर, ये हालात किसे दोगे
दादी मां के रखे...

चैन तो कहते हो दिल का तुम इसे,
कैसी है ये वहशत, ये पता किसे
दिल में दबा के कमजोरी का आलम
मुसीबतो के 'हम' जंगलात किसे दोगे,
दादी मां के रखे...।

सोचा न था

बहुत दूर से आंखों के नूर हो जाओगे
सोचा ना था इक दिन दूर हो जाओगे।

जिस जमाने से दुश्मनी की थी
उसी जमाने में काफूर हो जाओगे।

सोच तो लो कितने अकेले हैं हम
अपने दिल को फिर क्या किस्से सुनाओगे।

क्या सोच के बने थे हमसफर 'हम'
मिलोगे सपने दिखा के रूठ जाओगे।

दर्द ही रह गया है अब मुहब्बत में
कभी 'हम' दिखायेंगे कभी तुम जताओगे।

भ्रष्टाचार

सड़क खा गया, वो रिश्ते का भाई है
बिजली नहीं जली बस, बिल का जंवाई है।

मार ना डाले कोई एक चोर को
मौसेरों ने मिलकर फौजें बुलाई है।

सारे भाई भतीजे इकट्ठे हैं बाग में
कांटों के लिए फूलों ने कीमत चुकाई है।

एक से मिलेगा तो दूसरे को देगा
यही सोच साझेदारों ने रातें बिताई हैं।

हर इक से है रिश्ता, इस कायनात में
ये कैसी पैगम्बरी है, 'हम' कैसी खुदाई है।

बेइमानी का मुजरा

बेईमानी का मुजरा, शामें रंगीन हैं
ईमानदारी विधवा, दोपहर ग़मगीन है।

उनके यहां पे मेला, महफ़िल आबाद है
मुफ़लिसी का यहां आलम, जैसे जुर्म संगीन है।

ताकत बुजुर्गों की, क्या कर गुजर गये
इन दिनों कुछ उच्चके भी, नामचीन हैं।

नाच रहा है चौराहे पे, जो बेपर्दा हुआ
ओढ़े हुए लबादे, बैठा कुलीन है।

जीते हैं अजब लोग झूठ ओ ख़ार में
है फिक्र क्या 'हम' जो फाके-मस्ती में दीन है।

दिया जलाना है

बालकनी भी उसकी और दुश्मनी भी
शहर के लोगों से यही तो याराना है।

लूट कहो या तुम घूस कहो इसे
उनके लिए ये किस्मत का खजाना है।

मोहताज हो गये हम इक ईमान के
कानून है हाथ में, और बख्शीश मेहनताना है।

शहर की सारी मंजिलें, 'लाख' में बना दी
आपको भी इसी शहर में सर छुपाना है।

बैठे है बाज़ार में 'हम', सर पे रख के हाथ
माचिस भी गीली है और दीया भी जलाना है।

दोस्त

चार चेहरा किताब पर 18 हज़ार हो
एक पन्ना पसंद पर भी 6 हज़ार हो
नये रिश्ते के जैसा तुम बुखार हो
कहने को ही बस बेशुमार हो
अन्तर्जाल संबंध के यार हो
दोस्ती का जैसे ज्वार हो
पसंद टिप्पणी बांट हो
फेसबुक कमाल हो
दोस्त बेमिसाल हो।
करते बेखयाल हो
आदत बने फिलहाल हो
आदत बने फिलहाल हो
नया व्यापार मुनाफा मालामाल हो
नई दुनिया की नई मिसाल हो।

कुर्सी

आदमी कुर्सी पर नहीं बैठता
कुर्सी आदमी पर बैठती है।

कुर्सी के होते हैं दो हाथ
एक कमर और चार पैर
ढांचा तो होता है खाल नहीं
रक्त मांस और बाल नहीं
कुर्सी कुछ महसूस नहीं करती
जिंदा रहती है कभी नहीं मरती।

कुर्सी खुद कुछ नहीं करती
वरन करवाती है सब कुछ
कभी कुछ महान कभी तुच्छ
ये मिलती है या छीनी जाती है
कोई बनाता है किसी को मिल जाती है
है तो निर्जीव पर आती जाती है
है निष्प्राण पर प्राण ले जाती है।

कुर्सी के नहीं होते बीबी बच्चे
पर उजाड़ती है कईयों के घरौंदे

नहीं होते इसके दोस्त या दुश्मन
पर ये बहुतों को कराती आचमन
कुर्सी नहीं होती चोर या साहूकार
पर ये रखती है हिमायती पैरोकार।

कुर्सी कभी कुछ नहीं करती
कुछ महसूस भी नहीं करती
कुर्सी न हंसती है ना रोती
कुर्सी कभी खाली नहीं होती
इसलिए कुर्सी डरती भी नहीं है
आदमी डरता है इसके आने जाने से
रोशन गुलिस्तां के रीते खजाने से।

कुर्सी रौब दिखाती है
कुर्सी मान भी जाती है
कुर्सी भरोसा दिलाती है
कुर्सी देख तुम्हें मुस्कुराती है
कुर्सी आती है जाती है।

जंगल

जंगल मिला था हमें
उन किताबों की तरह
जिसे शैतान बच्चे नहीं पढ़ते
परीक्षा आने तक
हम भी नहीं पढ़े मटरगश्ती में
तरक्की रुकी है अगली कक्षा तक।

हरियाली और छाया मां जैसी
मिलती है बस गोद बैठने पर
गोद भी न हो पास तो रहे
चित्रों की मां तक भी देती है
कलेजे को ठंडक
तो हम एक फोटो लगाए बैठे हैं।

बड़े आदमी और बड़े पेड़
देते हैं एक सी छाया
नहीं कोई अपना पराया
छोटे ठूंठ करते शिकायत
पानी नहीं दिया मुझे
अब छाया भी नहीं तुझे।

मां का पालना रहता नहीं सदा
मिला बिना कुछ किये जो
जन्मने के नाम पर
कलेजे की ठंडक बन
टंगी रहती है मां फिर भी
घर की दीवार पर।

मां से जंगल उजड़ने तक
गर नहीं पड़ती ज़रूरत
दुनियादारी के पौधों की
या फिर पेट की अगन
बुझाने को ज़रूरत है
खुद के सींचे बीजों की।

हरा भरा भी जैसे
बस जरूरत जैसा है
कानून पीले पड़ जाते
आदमी हरे भरे को काट
सोचता है जंगल किस काम का है।

लज्जा राखो गोबिंद

आधा किलो बाजरा और एक किलो मूंगफली ले कर आये
पोते को देख दादी की आंखें नम हो आईं
दो लाख की मूंगफली होती थी अपनी ज़मीन पे,
पूरी उम्र घर के लिए कभी मोल न ली
अब पोती कह रही है–
वो शादी भी शादी नहीं जिसमें पास्ता न हो
तेरे दादा कहते रहे वो घर भी कोई घर नहीं
जिसमें गाय खूंटे से न बंधे
वो आंगन नहीं जिसमें नीम की निम्बोली न गिरे
इज़्ज़त नहीं उसकी जिसको गांव में न्योता न हो
सारे गांव गुआड़ी के भाई बंध बुलावे होते थे
पीले चावल में गणेशजी न्योतने न आवै तो दूर के कहाते थे
गांव के जीमण में पुरसगारी न करने वाले जवान
असामाजिक कहलाते थे
आज तो चाचा–ताऊ, मामा, भुआ, मौसी को
बिसराये लोग इज़्ज़तदार कहला रहे हैं
अब एक प्लाट में सोलह धन्ना सेठ
फ्लैटों की आधे पैसे में रजिस्ट्री करा रहे हैं।
लज्जा राखो गोबिंद!!

वक्र गति; सद् गति

मैं बेहतर हूँ, मैं अच्छा हूँ कार्यक्रम में
चुनाव में आदमी होना
दलित, पिछड़ा और मुसलमान
आदमी के कई नाम

नए ड्रामे, पटकथा और कहानी
नए सह नायक, चरित्र अभिनेता
लोकतंत्र की फिल्म के लिए
इवेंट मैनेजर, हावर्ड के प्रोफेसर ने
समाजवाद को चुनावी ज़रूरत भर बनाया
समाजवाद और पूंजीवाद इकट्ठा
गरीबी ने गहने उतार दिए थे
वो फिर गेहूँ, तेल, दवा के लिए तैयार था

पिता से अलग हो,
पिता से लड़ कर कोई
पिता से अलग दिखा रहा था।
चाचा, भाई–भाभी को दुश्मन बता रहा था।
कुनबा बढ़ाने भर को
भाई बना रहा, माई बुला रहा था।

कमज़ोरी की ताकत जानकर कमज़ोर होना चाह रहा था
वज़ूद की ज़मीन पर नाचता, खिलखिला रहा था
फायदे की सोच, मूर्ति लगा रहा था।

है आदमी होशियार, पर मूरख दिखा रहा था
सही गलत सब समझ पा रहा था
भविष्य के गर्भ में छुपा वर्तमान
काल अपना चक्कर चला रहा था।

और अपना वही आदमी
घूम फिर कर उसी जमीन पर
मुफ्त मिल जाए कुछ फिर से
वही गीत दोहरा रहा है
सही को गलत और
गलत को सही ठहरा रहा है।

बातें

होने को ज़माने भर की हैं बातें
किसी बात का कोई मतलब नहीं हो
ऐसा नहीं है
बातें कहने को होती हैं
सुनाने को भी होती हैं
ज्यादातर बताने को होती हैं
मतलब जब नहीं है बातों का
केवल जब वो काम की न हों
बेमतलब कहीं जाएंगी तब

वैसे वजन आदमी का नहीं बात का देखा जाता है
कोई कैसे बात का रिश्ता निभाता है
और ज़िंदा रखता है रिश्ते को
तो कोई कैसे रिश्ते निभाने में मर जाता है
ये भी कोई बात हुई भला
बात-बात में क्या मरना

बातों-बातों में क्या-क्या नहीं हुआ
या बातों बातों में कहां से कहां पहुंच गए
बातें ही हैं जो खत्म नहीं होतीं
बस शुरू होनी चाहिएं एक बार।

आओ हम दिखें समझदार

आओ कि खून के कतरे की बिना जांचें रिपोर्ट लिख दें
कठिन शब्द बस बिना किसी मशीन के तकनीक या तार से
ये कहते हुए के ये दर्द है नापा न जा सकेगा
आओ हम एक्स रे का काला कागज़ जड़ दे।।

आओ के हम उतार दें चमकते जूते
और ढूंढ लें पुरानी चप्पल तोड़ें फिर
सिलवाएं चौराहे पर पाखंड को
ताकि हम लोग इन्हें पहन के महंगे रेस्तरां में जा सकें
ये बताने कि दर्द हमारे साथ है।।

आओ के हम कुर्ते को पकड़ के पुरस्कार पाएं
या समझौते के पैग में झंडे को भूल जाएं
लोगों से छुपाने को ये फायदे का सच
ज़ोर से चिल्लाएं स्थापित बहुमूल्य बहुमत पे
जिससे लोग हमें देखें और पहचान जाएं।।

आओ के हम व्यक्तिगत हो जाएं,
सामूहिकता की बातें भी अकेले आदमी से करें,
नई जुगत लगाएं बुरा बताएं स्थापित मूल्यों को
और ज्यादा मूल्यवान कहलाएं

जन–जन हितैषी दिख जाएं
आओ के हम शांति के नाम पे लोगों को लड़ायें,
बेच दें अपने डंडे ज्यादा मुनाफे में किसी विदेशी को
फिर हो जाएं निहत्थे सरकारी सहायता के लिए,
आओ हम दिखें समझदार और अपना इतिहास झुठलाएं
अपने वजूद को साबित कर जाएं।

उखड़ जाए जो मूर्तिया हमारी
अपने आपको बताएं कि
दुनिया हमारे लायक नहीं
या फिर कि समझ देर से आयेगी
बेचारे का जामा पहन
सयाने बन जाएं।

भले लोग

भले लोग
अच्छे वक्त जैसे होते
अच्छा महसूस कराते हमें
भला करते हमारा और न कुछ लेते
और कुछ लादे बगैर निकल जाते

भले ही हमने ध्यान न दिया हो उतना
किया हो नज़रंदाज़ या फिर ले लिया हो हल्का
बोझ भी हमारा खुद ही हटा जाते
ताकि बोध न हो अपराध का हमें
बस मुस्कुराते निकल जाते

शर्मिंदगी में भी याद न दिलाते
बल्कि हमसे नज़रें चुराते
जैसे किया हो अपराध उन्होंने
और सामने आ गए हम बुरे वक्त से
कुछ न जताते निकल जाते

दुख को खुद का मानते अपना
मतलब न हो मदद न सहायता

जैसे बताने से होंगे दुखी हम
और हो जाएंगे वो छोटे
कुछ न दिखाते निकल जाते

कोई जतन काम न करे
सिवा मलाल के यों
कुछ न दे सके अब वक्त भी ज्यों
बड़े हो गए वो छोटा दिखा के
बस याद आते निकल जाते।

जैसे भलाई करना ही है काम
नापसंद के साथ भी कैसे धीरज
बनाएं रख
बदलने की सदाशयी कोशिश भर
क्या क्या सहते बिसराते
आह तक नहीं भरते मुस्कुराते।

मिट्टी के पहाड़ों पर टंगे गोल पत्थर

मिट्टी के पहाड़ों पर टंगे गोल पत्थर
नहीं है नदी बहने की गवाही भर ही
बदलते रास्तों और गिरते स्तर का प्रमाण भी है
या फिर एक सूखी नदी की कहानी

मुहाने पे बसे लोगों की फितरत और
सागर के तट पर बढ़ती आदम जात
भोलेपन से चंटपने
ऊंचाई से नीचे जाने का दर्शन
अच्छाइयां जैसे मोती रह जाएंगी पलेंगी सीपियों में बस

मुश्किलें ऊंचे रह पाने की हो जाती हैं बयां
या के सत्य भी पहाड़ से शुरू हो के दरिया हो जाएगा
मैदान में आसान जीवन के भरोसे बढ़ेगी परेशानियाँ
और आदमी आदमियत से दूर हो आदमी को खाएगा

पहाड़ के उजले रंग को
मैदानी सागर तट पे काला होना है
जैसे ज़माने भर से बह के आये
पानी को खारा होना है

समझ मे आ जाता है अचानक
ऊंचा चढ़ना कठिन है और फिर
बने रहना ऊंचाई पर और भी कठिन।

टंगे हैं हर पहाड़ पर अच्छी भली साधना के शालिग्राम
और कीच खारे जल की गहराइयों में रखी हुई
सीपियों के मोती बन के चमक रहे हैं
सुंदरियों के गले का हार
हमेशा नहीं तो कई बार।

उजले रंग पहाड़ों के सदा
शिखर पर सर्दी सहते
जमीन पर आकर पत्थर होते
उजले से स्याह ही जाते
जो थे आशीर्वाद वहां
अब दुआ कहाते।।

क़िस्मत शहर की

होती है हर शहर की क़िस्मत
कि उसे कौन मिलेगा
कहां बलवा तो कहां चैन पलेगा
कौन कौन बनेगा इज्जतदार और कौन लूटेगा
कौन आएगा कमाने और कौन बसेगा

होती है हर शहर कि किस्मत
उसमें महल बनेंगे या कि बगीचे कैसे
उसे बसायेंगे वास्तुविद या ऐसे वैसे
पनपेंगे व्यापार या विलासी
या जी लेंगे लोग जैसे तैसे

होती है हर शहर कि किस्मत
होगा उसका इतिहास खुद का
या वो खुद इक इतिहास बनेगा
बनेगा राजपथ या बस गरीब पलेगा
पनपेंगे लोग या बस मुसाफ़िर गुजरेगा

होती है हर शहर कि किस्मत
कि वहां क्या उपजेगा क्या रहेगा

क्या रहेगी कमी और क्या मिलेगा
वो रहेगा किसके हाथों में
और वहां कौन जन्मेगा

होती है हर शहर कि किस्मत
कि वहां कौन करेगा और कौन भरेगा
या कि अपनी फ़ितरत खुद भुगतेगा
धीरे धीरे या तेज़ तरक्की करेगा
लाखों किस्मतों को कौन बदलेगा।

होती है हर शहर की किस्मत
कि उसमें कुछ जुड़ेगा या घटेगा
काट देगा मानुष को मानुष से
या संस्कृति से जोड़ेगा
बदलाव देगा कोई वरदान
या फिर बस समय गुजरेगा।

अलग इज़्ज़त, अलग लिहाज़

मेथी के परांठे पालक की सब्जी और
बथुवे का रायता सब जुड़े हैं मौसम से,
अपना-अपना स्वाद ले काम आ रहे
शाक पात है सब हरे-हरे हैं
हालात अलग और नाम करे हैं

बथुआ उगता अपने आप
पानी भी न पूछा जाता अलग से
गेहूँ के साथ लग जाता उसका पानी पी
अलग से जो खेत में लग जाए तो
साफ कर दिया जाता।

पालक क्यारियों में उगता मेहनत से
सब्जी व्यंजनी पकौड़े या पनीर के साथ
पंच-सितारा दर्जा पाता
चटक रंग और अपने अंदर रखे हुए
आयरन की इज्ज़त से देखा जाता।

मेथी मसाले सी नस्ल में पहचान पाती
जतन से उगाई और सींची जाती

किस्मत ऐसी की सूखी हुई भी इज़्ज़त पाती
खुशबू होने से है नाम कमाती
साग नही तो मसाला हो जाती।

इंसान की कहानी सी लगते सब
खेत पानी रंग और मौसम
खुश्बू और गुण स्वाद के हिसाब
नसीब की औषधि या खर पतवार
अलग इज़्ज़त और अलग लिहाज़।

कीमत केवल मांग की नहीं
मांग केवल भांग की नहीं
पत्तियों की दुनिया में सब
कुछ हरा भरा ही नहीं होता
जरूरी है तृप्ति और स्वाद।

आग्रह और दुराग्रह

हम ही हैं जो
अपने आग्रह और दुराग्रह को
लादे हुए चल रहे हैं
सच्चा जीवन और झूठे दिलासों के बीच
चुनी हुई दीवार की ईंट से हैं हम
जो जमी है मसाले की सीमेंट से
पर खुद दीवार कहला रही है
बिना चूना लगाए
दीवार भी नहीं होगी
जब भी बनेगी दीवार
जब भी लगेगा चूना
जब भी बनेगा मसाला
भट्टे पर पकेगी ईंटें
अपने ही आग्रह और
दुराग्रह की
बनाये चाहे कोई भी
या फिर इस्तेमाल करे
टूटेगा नहीं
जब तक आग्रह या दुराग्रह।

आकाशवाणी की उपज

देवकी को अपने रथ पर ले जाते
कंस को सुनी आकाशवाणी से पूर्व तक
सब ठीक था।
उच्चारित हुआ था जिसमें
ले जा रहा है खुशी–खुशी जिसको
इसी देवकी की आठवीं संतान
वध करेगी
सुनते ही गया सब बदल
होती नहीं आकाशवाणी गर
जिसके पूर्व सब ठीक था
समझाया किसी ने आठवें तक तो ठहरो
मान भी गया था कंस
जिसके पूर्व तक सब ठीक था
फिर नारद दोनों तरफ से रेखाएं गिनकर
आकाशवाणी के समर्थन में लाए दस्तावेजी गवाही
या फिर तस्दीक कर गए नक्शा मौका
अपने ही भानजे से भयभीत कंस के मन का
गोकुल के सब शिशुओं के वध का राज्यादेश
या फिर इससे पूर्व उग्रसेन को सपत्नीक कारावास
या पूतना का राजकीय कार्य सम्पादन

जिसके पूर्व तक सब ठीक था
देवकी के कारावास
पराई मां का दुग्धपान
जन्म से पूर्व सात भाई बहिनों का खोना
ग्वालों संग पालन
गैय्या संग लालन
राधा संग विहार
सुदामा संग आहार
एक आकाशवाणी की उपज ही रहे
जिसके पूर्व तक सब ठीक था।

बिना कुछ कहे गांधारी को
ना प्रतिकार ना सफाई
आज्ञा जैसे शिरोधार्य
आरोप की नहीं सफाई बिना
दस्तावेज बिना गवाही
द्रोपदी की सहायता भर कर्म जैसे
शकुनि का दोष दुर्योघन की
हठ का जिक्र तक नहीं
वंश नाश का श्राप शिरोधार्य
होने से पूर्व तक सब ठीक था।

एक पैगाम है जो देना है

हमला ही है जो होता नहीं किया जाता है
किसी अंध अस्तित्व पर,
जो जी रहा है हमलावर से अलग
हमला होता है ये बताने के लिए
कि मैं तुमसे बेहतर नही परेशान हूँ
अपनी मुसीबतो को दिखाने को नही
बल्कि जताने को कि मुसीबत के पीछे तुम हो।

हमलावर नहीं जानता दिखाने,
बताने और जताने का मतलब
न तोला न रत्ती का माशा
बस ये है एक तमाशा
जब तक दिखाता है तुम मानते हो
कि मैं हूँ पूरा, स्वतंत्र और साबुत
ये अहम तुष्ट होता, एक भ्रम पुष्ट होता।

कबीला मानता इसी से बड़ा गुण्डा
मूरख सोचते है बहादुरी काम आएगी
सभ्रान्त सोचते परेशान करेगा

या कि मैं इस्तेमाल करूंगा एक दिन
वो डालता दुश्मनों के खिलाफ टुकड़े
देने लगता कुछ चंदा और दुखड़े
इसी गुंड़ई को चंदा मिलता
यही देख कुनवा खिलता
इसी खुशी से कबीला चलता।

ऐसे चलता कारोबार सोच का
हमला चलता रहेगा गुण्डा पलता रहेगा
मैं ज्यादा हूँ, मैं बेहतर हूँ
मैं जियूंगा ज्यादा तुमसे
इस बेहतर दिखाने के पीछे
इस परेशान बताने के पीछे
अहम की तुष्टि नहीं, कबीले की पुष्टि नहीं
अपने कायदे नहीं, किसी के फायदे नहीं
एक चंदा है जो लेना है
एक पैगाम है जो देना है।

नीतियां

नीतियां हमेशा लाखों के लिए है
अनीतियां सदा कुछ ही लोग करेंगे
भलाई करने के युद्ध में बुराई पनपेगी सदा।
बहुत सारों के लिए काम करना
करने वाले कम होते है तो
पाने वाले बहुत सारों के लिए
छांटने है बहुत कम

एक आत्मा को ढक दिया है
करोड़ों रोम छिद्रों ने या कि
हजारों हड्डियो सैकड़ों उपांगों ने
धड़कता है दिल एक सभी को
चलाने के लिए जिन्दा रख पाने के लिए

दर्जनों अंगों ने अपनी प्रभुता
खोई है एक शरीर बनाने में
चलाता है जिसे एक लीडर सा
दिमाग आबद्ध है जो सभी की
भलाई में या कि सुरक्षा के लिए
बस बेइमानी की कोई जगह नहीं है

इस पंचतन्त्र में जंगल जब तक है प्राकृतिक
सियार की मौत आएगी तो शहर की
ओर भागेगा कलुषित हो जाएगा
फिर उपवन में भले ही फूल हर मौसम में उगते रहे।

परहित सरस धर्म नहीं
और परपीड़ा सी अधमाई
नहीं है धर्म में ताकि
कोई बोझ ना रहे आत्मा पर
कर गए जो करने आए थे
कल्याण लोक का या
परलोक का।

स्वयं निरंतर जुटकर होती शक्ति की आराधना
सहेजना कठिन शक्ति को फिर अपने हित बांटना

स्वयं के लिये कठोर और उदार दूसरों के लिए
स्वयं से प्रारम्भ करते दूसरों के लिये जिए

मुस्कुराकर तंज़ सहकर शक्ति संग सहकार है
राष्ट्र के लिये परीक्षा नित नई स्वीकार है

है कठिन सहेजना प्रतिदिन की एक प्रार्थना
समय पर एक निर्णय हेतु साधना को थामना।।

आवरण चित्रकार

शीला पुरोहित

शीला पुरोहित जयपुर से पेपर मेशी और वॉटरकलर आर्टिस्ट! राजस्थान ललित कला अकादमी से राज्य कला पुरस्कार एवं राज्य कला रत्न से सम्मानित है कई राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुके हैं! अंतर्राष्ट्रीय कला प्रतियोगिता में आर्टिस्ट ऑफ द ईयर अवार्ड प्राप्त हुआ! पेपरमेमेशी, प्राकृतिक रंग व घरेलू कबाड़ जैसे कि अपने आर्ट में उपयोग में लेकर आर्टवर्क बनाती है कलाकृतियों में जीवन मूल्यों, प्रकृति एवं मानवता को बचाने का संदेश निहित होता है! पेंटिंग एवं मूर्ति कला के साथ हिंदी कविताएं लिखने का भी शौक है! वृक्षों के हजारों चित्र बनाने, प्रकृति चित्रण में दक्ष कलाकार।